PRESS INFORMATION BUREAU
पत्र सूचना कार्यालय
GOVERNMENT OF INDIA
भारत सरकार

Business Bhaskar, Faridabad
Tuesday, 19th July 2011, Page: 4
Width: 32.68 cms Height: 15.88 cms, Ref: pmin.2011-07-19.58.42

सिर्फ कीमत नहीं है कंपनियों के बिकने की वजह

बिजनेस भास्कर

वर्ष, 2008 में जापानी फार्मास्यूटिकल्स कंपनी दाइची सैंक्यो ने भारतीय दिग्गज फार्मास्यूटिकल्स कंपनी रैनबैक्सी की 34 फीसदी हिस्सेदारी खरीद ली। इसके बदले रैनबैक्सी के प्रमोटरों को 9000 करोड़ रुपये हासिल हुए। उस समय इसके वैल्यूएशन पर कॉरपोरेट जगत में काफी हैरानी जताई गई थी। इसके बाद एक के बाद एक कई घरेलू फार्मास्यूटिकल्स कंपनियों को विदेशी फार्मा कंपनियों ने खरीद लिया। इन कंपनियों को इसकी जो कीमत मिली वह बाजार भाव के हिसाब से काफी ज्यादा लग रही थी। बीच के दो साल की चुप्पी के बाद एक बार फार्मा के साथ-साथ दूसरी कंपनियों में भी अपनी हिस्सेदारी बेचने का एक ट्रेंड दिख रहा है। हाल में पारस फार्मास्यूटिकल्स ब्रिटेन की रेकिट बेंकिसर के हाथों 3260 करोड़ रुपये में बिक गई। इसके प्रमोटर गिरीश पटेल को अपनी 30 फीसदी हिस्सेदारी के लिए सीधे 1000 करोड़ रुपये मिले। इसी तरह स्टेशनरी कंपनी केमलिन ने अपनी 38 फीसदी हिस्सेदारी जापानी कंपनी कोकुयू को 366 करोड़ में रुपये में बेच दी। अब बाजार में कुछ और कंपनियों की हिस्सेदारी बेचे जाने की भी खबरें आ रही हैं।

आखिर जानी-मानी और जमी-जमाई कंपनियों के प्रमोटरों को अपनी हिस्सेदारी बेचने की क्या सूझी है? क्या उन्हें बाजार में मिल रहे जबरदस्त वैल्यूएशन का आकर्षण ऐसे कदम उठाने को प्रेरित कर रहा है? क्या उन्हें अपने कारोबार को और विस्तार देने का रास्ता नहीं सूझ रहा है? क्या वो यह समझ रहे हैं कि मौजूदा बिजनेस से अब पहले जैसा मार्जिन हासिल करना मुश्किल है? क्या उन्हें कंपनी को आगे बढ़ाने के लिए योग्य उम्मीदवार नहीं मिल रहे हैं? क्या वह अपने संसाधनों के बूते बहुराष्ट्रीय कंपनियों से मुकाबले करने में खुद को अक्षम पा रही हैं? क्या अपनी परंपरागत बिजनेस को छोड़कर नए सेक्टर में हाथ आजमाना चाहते हैं? माना जाता है कि अगले 20 साल में भारत उपभोक्ताओं के हिसाब से देश का पांचवा बड़ा बाजार बन जाएगा। ऐसे में कारोबार से बाहर निकलने वाली कंपनियां आने वाले जबरदस्त मौके को क्यों नहीं हासिल करना चाहतीं? दरअसल प्रमोटरों की ओर से अपनी हिस्सेदारी बेचने के पीछे यह सभी वजहें हो सकती हैं? या कहिये हैं।

प्रमोटरों को अपनी कंपनियों का अच्छा वैल्यूएशन तो मिल ही रहा है, वे भारतीय बाजार में नए उभरते सेक्टर का भी लाभ लेना चाहते हैं। मसलन रैनबैक्सी अब जोर-शोर से फाइनेंशियल सेक्टर में उतर आई है। रेलिगेयर कंपनी इंश्योरेंस से लेकर म्यूचुअल फंड समेत कई फाइनेंशियल उत्पाद बेच रही है। उसी तरह अमेरिकी कंपनी एबॉट को अपना फॉर्म्यूलेशन 17,000 करोड़ रुपये बेचने वाली पिरामल हेल्थकेयर भी फाइनेंशियल सेक्टर और गैर बैंकिंग वित्तीय सेक्टर में उतरना चाहती है। कई कंपनियों को लग रहा है कि बहुराष्ट्रीय कंपनियों से मुकाबला करना मुश्किल है। साथ ही वह अपने कारोबार में नए प्रयोग करने और

सिर्फ अच्छी कीमत ही प्रमोटरों को अपनी कंपनी बेचने को प्रेरित नहीं कर रही हैं। नए दौर में आगे बढ़ने के लिए कंपनियों को जिन संसाधनों और योग्यता की जरूरत है, वह लगातार महंगी होती जा रही हैं। साथ ही कई कंपनियों के प्रमोटरों की अगली पीढ़ी अपने पारंपरिक कारोबार में दिलचस्पी खो रही है। इस समय कई सेक्टरों में नए अवसर पैदा हो रहे हैं। इस वजह से कई कंपनियां अपना पुराना कारोबार छोड़कर नए सेक्टर में प्रवेश कर रही हैं। घरेलू बाजार में बहुराष्ट्रीय कंपनियों के बढ़ते मौके की वजह से भी घरेलू कंपनियों के प्रमोटरों को कंपनी बेचने पर अच्छा पैसा मिल रहा है।

कंपनी	प्रमोटरों ने बेची	कीमत
रैनबैक्सी लेबोरेटरीज	34 फीसदी	9000 करोड़ रुपये
पिरामल हेल्थकेयर	49 फीसदी	17,000 करोड़ रुपये
इस्पात इंडस्ट्रीज	41 फीसदी	2157 करोड़ रुपये
पटनी कंप्यूटर्स	45.6 फीसदी	5400 करोड़ रुपये
पारस फार्मा.	30 फीसदी	1000 करोड़ रुपये
केमलिन	—	366 करोड़ रुपये

उत्पादों को प्रतिस्पर्धी बनाने में पिछड़ रहे हैं। मसलन रैनबैक्सी को ही ले लीजिये। कंपनी के पूर्व प्रमोटरों का मानना है कि फार्मास्यूटिकल्स एक ऐसा सेक्टर है, जहां भारी पैमाने पर गंभीर निवेश चाहिए। साथ ही आर एंड डी पर काफी पूंजी निवेश करना पड़ता है। नई दवाइयां विकसित करने के लिए लंबी अवधि तक एक ही दिशा और उत्साह से काम करना पड़ता है। कंपनी को लग रहा था उसने बाजार से अधिकतम लाभ हासिल कर लिया है और आगे का कारोबार उसके लिए ज्यादा लागत प्रभावी नहीं रह जाएगा। लिहाजा प्रमोटरों ने अपनी हिस्सेदारी बेच कर फाइनेंशियल सेक्टर में प्रवेश की ठानी, जहां घरेलू बाजार में बेहद ज्यादा संभावना दिख रही है। कुछ कंपनियों के प्रमोटरों के परिवार में अब नई पीढ़ी को परंपरागत कारोबार में दिलचस्पी नहीं दिख रही है। पारस फार्मास्यूटिकल्स के प्रमोटर गिरिश अग्रवाल को दूसरी पीढ़ी में फार्मा कारोबार के प्रति दिलचस्पी नहीं दिखी। लिहाजा उन्होंने इससे निकलने का फैसला किया और अपनी हिस्सेदारी 1000 करोड़ रुपये में बेच दी।

केमलिन 1931 से ही भारत में कारोबार कर रही है। स्टेशनरी सेक्टर में कई बहुराष्ट्रीय कंपनियों के आ जाने के बाद भी कंपनी ने अपनी ब्रांड वैल्यू बना रखा था और नए उत्पादों के साथ प्रतिस्पर्धियों के मुकाबले खड़ी थी। लेकिन कंपनी ऐसे मोड़ पर आ चुकी थी, जब प्रमोटर के परिवार की चौथी पीढ़ी के हर सदस्य को इसमें शामिल करना मुश्किल हो रहा था। लिहाजा कंपनी के चेयरमैन और मैनेजिंग डायरेक्टर दिलीप दांडेकर ने अपनी 38 फीसदी हिस्सेदारी 366 करोड़ रुपये में 5000 करोड़ रुपये की जापानी कंपनी कोकुयू को बेच दी। इस तरह दांडेकर ने रणनीतिक रूप से एक बेहतर फैसला किया। दांडेकर कंपनी की मौजूदा पोजीशन पर बने रहेंगे लेकिन अब उनके पास में 14 फीसदी इक्विटी हिस्सेदारी ही बची रहेगी। दांडेकर के मुताबिक कोकुयू पेपर स्टेशनरी का विशेषज्ञ कंपनी है और उन्हें इसके जरिये अपने ब्रांड को आगे बढ़ाने का रास्ता सूझ रहा था। कई लोगों को मानना है कि बहुत सारी ऐसी कंपनियां हैं, जिन्हें अब कारोबार के नए दौर में प्रवेश करना पड़ रहा है। इस दौर में प्रतिस्पर्धा ज्यादा और इसके लिए उन्हें अलग-अलग तरह के संसाधनों और योग्यता की जरूरत है। साथ ही बदले वैश्विक परिस्थिति में कई सेक्टरों की जमी-जमाई कंपनियों में नई चुनौतियां हैं। इस्पात इंडस्ट्रीज के प्रमोटरों ने अपनी 41 फीसदी हिस्सेदारी जेएसडब्ल्यू को 2012 करोड़ रुपये बेच दिया था। इस्पात में वित्त विभाग के कार्यकारी निदेशक ओलिन मुखर्जी का कहना है कि इस्पात उद्योग मूल रूप से टुकड़ों बंटा होता है। बुनियादी कच्चे माल और कोकिंग कोल पर बड़ी अंतरराष्ट्रीय कंपनियों का नियंत्रण है। चीन में प्रोसेसिंग यूनिटों में काफी बढ़ोतरी हुई है। साथ ही पिछले कुछ साल में इनकी मांग में जबरदस्त इजाफा हुआ है और ये महंगे हो गए हैं। इस्पात के पास कोई कैप्टिव माइन्स नहीं थी। न तो इसे [illegible] और अयस्क मिल सकता था और न ही कोकिंग कोल। ऐसे में [illegible] स्टील कंपनियों पर निर्भर थी। इसका प्रतिस्पर्धा में पिछड़ना तय था। लिहाजा इस्पात ने हिस्सेदारी बेचने में ही भलाई समझी। इस तरह बेहतर कीमत मिलने का मुनाफा, प्रतिस्पर्धा में बने रहने में कठिनाई, भारत में बदलाव और कंपनियों के प्रमोटरों की नई पीढ़ी में दिलचस्पी का अभाव, ऐसे कारण हैं, जिनकी वजह से कंपनियों के बिकने का ट्रेंड तेज हो गया है। इसके अलावा बड़ी बहुराष्ट्रीय कंपनियां भारत में अपना तेजी से विस्तार करना चाहती हैं। कई सेक्टरों में इस समय जबरदस्त सक्रियता है। खास कर ऐसे सेक्टर में जिनमें उपभोक्ता से सीधे सामना होता है या फिर टेक्नोलॉजी सेक्टर। रिटेल और फाइनेंशियल सेक्टर में अपार संभावनाएं दिख रही हैं। रिटेल में संगठित क्षेत्र की हिस्सेदारी सिर्फ पांच फीसदी है। इस तरह देश में 25 फीसदी लोगों के पास भी इंश्योरेंस पॉलिसी नहीं है। इस तरह के हालात में हमें आने वाले दिनों कुछ और बड़े अधिग्रहण देखने को मिल सकते हैं।

बड़ी बहुराष्ट्रीय कंपनियां भारत में अपना तेजी से विस्तार करना चाहती है। कई सेक्टरों में इस समय जबरदस्त सक्रियता है। खास कर ऐसे सेक्टर में जिनमें उपभोक्ता से सीधे सामना होता है या फिर टेक्नोलॉजी सेक्टर। रिटेल और फाइनेंशियल सेक्टर में अपार संभावनाएं दिख रही हैं। रिटेल में संगठित क्षेत्र की हिस्सेदारी सिर्फ पांच फीसदी है। इस तरह देश में 25 फीसदी लोगों के पास भी इंश्योरेंस पॉलिसी नहीं है। इस तरह के हालात में हमें आने वाले दिनों कुछ और बड़े अधिग्रहण देखने को मिल सकते हैं।